ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol-2* Issue-8* September- 2017
Innovation The Research Concept

भारतीय न्यायपालिका द्वारा मौलिक अधिकारों में सृजनात्मकता एवं नवाचार का संविधानवाद पर प्रभाव

सारांश

भारतीय न्यायपालिका वस्तुतः ऐसी न्यायपालिका है जिसने सृजनात्मकता तथा संवैधानिक नवाचार को न केवल आत्मसात किया है, वरन् एक क्रांति के रूप में इसमें अभिवृद्धि की है।अभी हाल में भारतीय सर्वोच्च न्यायालय निजता के अधिकार को मौलिक अधिकार के रूप में स्थापित कर अपनी इस प्रवृत्ति को धरातल में उतारता है। भारतीय उच्चतर न्यायपालिका के इस प्रतिमान का संसदीय संविधानवाद पर क्या प्रभाव है? एक बहस का विषय अवश्य है। क्या भारतीय न्यायपालिका संविधान निर्माताओं की मंशानुकूल कार्य कर रही है? क्या भारतीय न्यायपालिका ने भारतीय नागरिकों के मौलिक अधिकारों तथा मानवाधिकारों के संरक्षण में कहीं लिखित संविधान को निर्मित संविधान की भांति प्रयुक्त तो नहीं कर रही है? इत्यादि प्रश्न स्वाभाविक रूप से उठना सामान्य बात है। अभी हाल में निजता के अधिकार को मौलिक अधिकार का दर्जा प्रदान करने के बाद यह बहस और अत्यधिक प्रासंगिक बन जाती है।

मुख्य शब्द : संविधानवाद, न्यायपालिका, संसदीय, राजनीतिक

विकास कुमार दीक्षित
शोधार्थी,
राजनीति विज्ञान विभाग,
रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय
जबलपुर (म0प्र0)

प्रस्तावना

'संविधानवाद'(कांस्टीट्यूशनलिज्म) एक ऐसी अवधारणा है जिसका आशय यह है कि किसी राज्य का शासन, संविधान संगत रीति के अनुकूल चलना चाहिये ताकि शासन का कोई अंग(आर्गन ऑफ गवर्नमेंण्ट) या पदाधिकारी(आफिस होल्डर) मनमानी न कर पाए। उपरोक्त 'संविधानवाद' के दृष्टिकोण के अनुसार, जिसे देश का संविधान न केवल वहाँ का शासन चलाने हेतु ढांचा प्रस्तुत करता है, वरन् शासन के तीनों अंगों यथा कार्यपालिका, व्यवस्थापिका तथा न्यायपालिका की शक्तियाँ भी निर्धारित करता है तथा यह निर्देश देता है कि यह अंग संविधान के भीतर अपनी नियत सीमाओं में रहकर शक्तियों का प्रयोग करेंगे। अतः उपरोक्त संविधानवाद की अवधारणा की सार्थकता तभी है जब संविधान तीनों अंगों पर प्रभावात्मकता से नियंत्रण स्थापित कर सके।[1]

'संविधानवाद' एक राजनीतिक दर्शन के रूप में स्थापित करता है कि सरकार की सत्ता उसके नियंत्रणाधीन नागरिकों से प्राप्त होती है, जो कि अभिव्यक्त होनी चाहिये तथा यह नियत होना आवश्यक है कि सरकार क्या कर सकती है तथा क्या नहीं कर सकतीं इस अवधारणा का अर्थ है कि सरकार अपने तीनों अंगों के साथ लिखित संविधान के प्रति कर्त्तवयारूढ हो कर कार्य करे।[2]

अध्ययन का उद्देश्य

प्रस्तुत शोधपत्र का उद्देश्य सर्वप्रथम न्यायिक नवाचार व सृजनात्मकता का मौलिक अधिकारों तथा मानवाधिकारों के क्षेत्र में परीक्षण करना, द्वितीय इसके कारणों यथा पृष्ठभूमि आदि को परिलक्षित करना, तृतीय संविधानवाद के सिद्धांत पर न्यायिक नवाचार एवं सृजनात्मकता यथा न्यायिक सक्रियता का विश्लेषण करना।

भारतीय न्यायपालिका की मौलिक अधिकारों में सृजनात्मकता एवं नवाचार

भारतीय संविधान भारतीय न्यायपालिका को संविधान के संरक्षण तथा र्निवचन की जिम्मेदारी सौंपता है। सरंक्षण अर्थात विधायिका का बहुमत स्वेच्छाचारिता न कर सके तथा कार्यपालिकीय निरंकुशता को रोका जा सके। भारतीय न्यायपालिका की सृजनात्मकता संरक्षण के ऊपर प्रभावी होती दिखाई दे रही है। भारतीय संविधान का अनुच्छेद 21 का अंतहीन विस्तार स्पष्टतः दिखाई देता है।

न्यायपालिका की सृजनात्मकता तथा नवाचार नये प्रतिमान सिद्धान्त तथा अवधारणाओं को जन्म दे रहा है, जो संभवतः संविधान निर्माताओं के परिकल्पना से दूर थे। मौलिक अधिकारों का न्यायिक उन्नयन अग्रलिखित है–

युक्तिसंगत विभेद का अधिकार

अनुच्छेद 14 के अनुसार विधि के समक्ष समानता का अधिकार प्रदत्त करती है। परन्तु , मुक्ति संगतता, (reasonability) की अवधारणा भारतीय न्यायपालिका की देन है। निर्वचन के दौरान माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने पाया कि अनुच्छेद 14 द्वारा उपचार की समानता (similiarity) प्रत्याभूत की गयी है। न कि एक समान(identical) उपचार की, अतः असमानता की सीमा, जिससे व्यक्ति समान उपचार का हकदार नही रह जाता, एक ऐसा प्रश्न है जो बेहद तंत्र (veyed) करने वाला है। भारतीय सर्वोच्च न्यायालय ने अनुच्छेद 14 के निर्वचन मं युक्तियुक्त वर्गीकरण (rational classification) तथा बोधगम्य अन्तरक (intelligible differentia) की अवधारणा को आत्मसात कर अनुच्छेद 14 में युक्तिसंगत विभेद का अधिकार प्रदान कर दिया।[3]

चिरंजीतलाल चौधरी प्रति भारत संघ[4] के बाद में माननीय सर्वाच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारण किया कि विधानपालिका को विधिक दृष्टिकोण से विषयों का चयन एवं वर्गीकरण करने की निस्कृत शक्ति प्राप्त है तथा एक निश्चित वर्ग के सभी सदस्यो के प्रति समान व्यवहार करती है तो सामान्यतः उस स्थित पर आपत्ति नही उठाई जा सकती परन्तु वर्गीकरण मनमाना नही हो सकता।

समान कार्य के लिये समान वेतन का अधिकार

समान कार्य के लिये समान वेतन का अधिकार भारतीय सर्वोच्च न्यायालय की ही देन है। संविधान के मूल पाठ में उक्त अधिकार कहीं भी दृष्टिगोचर नही है। परन्तु अनुच्छेद 16 के अन्तर्गत यह अधिकार प्रश्नगत किया जा सकता है।[5]

प्रेस की स्वतंत्रता का अधिकार

प्रेस की स्वतंत्रता (freedom of press) के अधिकार को संविधान के मूल पाठ में कहीं भी समायोजित या विष्लेशित नही किया गया है। परन्तु यह स्वतंत्रता वाक् एवं अभिव्यक्ति स्वातन्त्रय के अन्तर्गत आती है। माननीय उच्चतम न्यायालय अपने विभिन्न निर्णयों में इस पर प्रकाश डाला कि प्रेस स्वतंत्र भी अनुच्छेद 19 का एक भाग है। प्रेस अथवा मीडिया को लोकतंत्र का चतुर्थ आधार मानते हुए माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने इसे अनिवार्य एवं अपरिहार्य माना है।[6] 'प्रेस की स्वतंत्रता' के अधिकार का न केवल माननीय सर्वाच्च न्यायालय ने सृजन किया वरन् इस अधिकार को समग्रता देने का भी प्रयास किया तथा इस अधिकार में ही अखबारों, प्रिण्ट मीडिया के परिचालन (circulation) के अधिकार की स्वतंत्रता,[7] संलग्न कर्मचारियों में नियुक्ति में स्वतंत्रता का अधिकार[8] बिना किसी सेंसर अथवा रोक के समाचारो के प्रकाशन का अधिकार [9] भी सम्मिलित किया गया है।

नागरिको के जानने का अधिकार

सरकार जनता के प्रतिनिधियो का ही सूक्ष्म एवं संगठित स्वरूप है। अतः जनता को सरकार की समस्त गतिविधियो, नीतियो एवं नियमो को जानने का अधिकार है। समाज के प्रत्येक सदस्य को अपने स्वयं के विश्वासो के निर्माण और उन विश्वासो को अन्य लोगो को स्वतंत्रतापूर्वक संसूचित करने योग्य होना चाहिए इस प्रकार प्रेस की स्वतंत्रता में जानने का अधिकार जैसा मूल अधिकार समाविष्ट है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय का अभिमत है कि वाक् एवं अभिव्यक्ति को इस प्रकार ऐसे समस्त उन व्यक्तियों का उदार समर्थन प्राप्त होना चाहिए जो इस अवधारणा में विश्वास रखते है कि जनता को प्रशासन का भागीदार बनना चाहिए। समाज का चूँकि, इस प्रकार, वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता में एक विशेष हित अर्न्तवलित होता है। अतः सरकार को चाहिए कि इस उद्योग पर करारोपण से ऐसे मौलिक अधिकार का अतिक्रमण न हो।[10]

विज्ञापन की स्वतंत्रता का अधिकार

विज्ञापन को भी एक प्रकार का अभिव्यक्ति का अधिकार माना गया है तथा माननीय सर्वाच्च न्यायालय ने इसे एक प्रेस की स्वतंत्रता का प्रकार माना है। माननीय उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि यदि समाचार पत्रो अथवा पत्रिकाओं के विज्ञापन के स्थान पर निर्बन्धन लगाया जाता है तो इससे प्रेस की आय पर प्रभाव पड़ता है। विज्ञापन यदि वृत्ति और व्यापार के तत्व से परिपूर्ण है, तो उन पर अधिरोपित निर्बन्धन वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर अधिरोपित निर्बन्धन नही है।[11]

प्रदर्शन हड़ताल एवं बन्द की स्वतंत्रता

प्रदर्शन एक प्रकार की अभिव्यक्ति का साधन है जो कि न केवल जन भावना को उद्घाटित करता है वरन् राजनीतिक व्यवस्था के प्रति प्रश्न आपेक्षित करता है। यह न केवल व्यक्ति या व्यक्ति समूहो को भावुकता को अभिव्यक्ति प्रदान करने का अवसर प्रदान करता है। बल्कि उनके हदय की वेदनाओं के प्रति शासन अथवा व्यवस्था का ध्यान आकृष्ट करता है। अतः यह एक प्रकार का अभिव्यक्ति का अधिकार ही है। ऐसा माननीय उच्चतम न्यायालय ने कामेश्वर प्रसाद प्रति बिहार राज्य[12] के वाद में अभिनिर्धारित किया। तथा यह भी स्पष्ट किया कि कोई भी प्रदर्शन यदि इतना प्रबल है कि उससे लोक शान्ति व कानून व्यवस्था अथवा अमन चैन व्यवधानित करता है तो वह अनु0 19 (2) के अर्न्तगत निर्बन्धित किया जा सकता है।[13]

टी0के रंगराजन प्रति तमिलनाडु सरकार[14] के वाद में भारतीय न्यायपालिका एक कठोर स्वरूप में दिखाई देती है। माननीय सर्वाच्च न्यायालय रोज–रोज की हड़ताल को लेकर कठोर दिखाई दिया, वस्तुतः ''हड़ताल'' से अन्य नागरिको के अधिकारों का अतिलंघन होता है। अतः यह मौलिक अधिकार की श्रेणी में नही आता है।

जीविका का अधिकार

'जीविका का अधिकार' एक ऐसा अधिकार है जिसके बिना अनुच्छेद 21 को प्रत्याभूत ''प्राण का अधिकार'' का कोई भी औचित्य नही है, यह माननीय सर्वाच्च न्यायालय ने सुप्रसिद्ध वाद ओलगा तेलिस प्रति बाम्बे म्यूनिसिपल कारपोरेशन,[15] अतः जीविका का अधिकार

एक मौलिक अधिकार है। इस वाद में याचिकाकर्ता मुम्बई नगर की सड़कों की पटरियो और मलिन बस्तियो के निवासी थे तथा उनकी बस्ती तथा छोटी–छोटी दुकानो को बी0एम0सी0 ने मुम्बई म्युनिसिपल कारपोरेशन एक्ट की धारा 314 के अन्तर्गत नष्ट करने का निर्णय लिया था, याचीगणों ने इस आदेश को चुनौती इस आधार पर दी कि बी0एम0सी0 का निर्णय संविधान के अनुच्छेद 14,19 और अनुच्छेद 21 का अतिलंघन करता है।

सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि याचिका अनुच्छेद 32 के अन्तर्गत चलने योग्य है। उच्चतम न्यायालय ने यह भी कहा कि यदि जीविका को वंचित किया जाना विधि द्वारा स्थापित युक्तियुक्त प्रक्रिया द्वारा संपन्न नही किया जाता तो अनुच्छेद 21 का उल्लंघन होगा।

बाम्बे म्यूनिसिपल कारपोरेशन एक्ट की धारा 314 द्वारा फुटपाथों, पटरियों या किसी ऐसे स्थान पर, जिस पर जनता को प्रवेश या रास्ते का अधिकार प्राप्त है पर अतिक्रमण हटाने का अधिकार प्राप्त है। तथा इसमे विहित प्रक्रिया अयुक्तियुक्त नही है।

विदेश जाने का अधिकार

माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिर्निधारित किया कि विदेश जाने का अधिकार दैहिक स्वतंत्रता की अभिव्यक्ति है। यह निर्णय सतवंत सिंह प्रति ए0पी0ओ0 दिल्ली[16] के प्रकरण में दिया, इस वाद में याची सतवंत सिंह नामक एक व्यक्ति के पासपोर्ट को सरकार ने वापस ले लिया था यह निर्णय विधि द्वारा युक्तियुक्त कारण के बिना किया गया था। अतः माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने आदेश दिया कि सरकार का निर्णय असंवैधानिक है। अतः मौलिक अधिकारो में संचरण अथवा विदेश जाने का भी अधिकार भी सम्मिलित है।

निःशुल्क विधिक सहायता का अधिकार

राज्य के खर्चे पर निंधन अभियुक्त को निःशुल्क विधिक सहायता एक संवैधानिक आदेश है और राज्य सरकारें इस निमित्त पर्याप्त उपबन्ध करने के लिये बाध्य है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह विहित किया, कि इस अधिकार के उल्लंघन में अभियुक्त का विचारण प्रभावित हो सकता है।[17] अनुच्छेद 21 में निःशुल्क विधिक सहायता प्राप्त करने का अधिकार अभिनिहित है। इस सुविधा से विहीन प्रक्रिया उन लोगो के संदर्भ में युक्तियुक्त ऋजु और न्यायपूर्ण प्रक्रिया नही मानी जा सकती, जो अपने खर्च से यह सेवा नहीं प्राप्त कर सकते। ऐसे विचारणाधीन बन्दी, जो विधिक सहायता के अभाव में अपने को जमानत पर छुड़वाने में असमर्थ है, उनको राज्य के खर्च पर निःशुल्क विधिक सहायता पाने का अधिकार हैं।[18]

त्वरित चिकित्सीय सहायता का अधिकार

माननीय सर्वोच्च न्यायालय की साहसिक रचनात्मकता 19 का उदाहरण, इण्डियन कौंसिल ऑफ लीगल एड ऐण्ड एडवाइस प्रति भारत संघ[19] के वाद में परिलक्षित होता है, विभिन्न दुर्घटनाओं में घायल व्यक्तियो को उपचार हेतु अनेक कानूनी औपचारिकताओं से गुजरना पड़ता था। अतः घायलों को अस्पताल पहुॅचाने का जोखिम कोई साधारण व्यक्ति नही लेना चाहता था, अस्तु विधायिका द्वारा इस समस्या का निदान न किये जाने से तमाम क्षतिग्रस्त व्यक्तियों की जान मार्ग दुर्घटनाओं में उपचार न मिलने के कारण चली जाती थी। इस समस्या के निदान हेतु माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि त्वरित चिकित्सकीय सहायता घायल व्यक्ति का मौलिक अधिकार है अतः इसको प्रदत्त करना राज्य का कर्तव्य है। अतः अस्पताल को बिना किसी औपचारिकता पूर्ण किए सबसे पहले घायल व्यक्ति की चिकित्सा करनी चाहिए।

दोषमुक्ति के पश्चात अवैध रूप से कारागार में निरूद्ध व्यक्ति को प्रतिकर का अधिकार

माननीय सर्वाच्च न्यायालय ने दोषमुक्ति के पश्चात कारागार में बंदी किसी व्यक्ति को राज्य से प्रतिकर पाने का अधिकार, मौलिक अधिकार है क्योंकि इसका कारण राज्य की घनघोर लापरवाही है। यह निर्णय माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने रूदलशाह प्रति बिहार राज्य[20] में दिया। इस वाद में याची को विचारण के दौरान दोष मुक्ति के बावजूद चौदह सालों तक कारागार में रखा गया, उच्चतम न्यायालय ने याची की बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका अनु0 32 के अन्तर्गत स्वीकार की तथा याची के प्रतिकर के दावे को भी स्वीकार किया। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने इसे देश की सभ्यता का पतन बताया तथा कहा कि नागरिको के अधिकारो का समादर गणतंत्र का आधार स्तंभ है एवं शासकीय प्रशासकीय अकर्मण्यता का खामियाजा नागरिको पर नही डाला जा सकता।

पानी का अधिकार

माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया की जल ही जीवन है। अतः पानी के बिना प्राण के अधिकार का कोई प्रयोजन नही है। अतः पानी का अधिकार अनुच्छेद के अन्तर्गत एक मौलिक अधिकार है। यह निर्णय माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने कर्नाटक राज्य प्रति आन्ध्र प्रदेश राज्य[21] के वाद मे दिया। इस अधिकार की पुष्टि सर्वोच्च अदालत ने नर्मदा बचाओ आन्दोलन प्रति भारत संघ[22] के वाद में भी किया है इस में न्यायालय ने स्पष्ट किया कि इस अधिकार को तभी सुनिश्चित किया जा सकता है। जब वहॉ जल स्रोत की व्यवस्था कर दी जाए जहॉ यह बिल्कुल नही है।

अनुच्छेद 21 का अन्तहीन विस्तार एवं मानवाधिकार

भारतीय न्यायपालिका की सृजनशीलता व नवाचार का केन्द्र बिन्दु अनुच्छेद 21 रहा है। अनुच्छेद 21 को मानवाधिकार का प्रकाश पुन्ज माना जाये तो अतिशंयोक्ति न होगी क्योंकि यही से भारतीय न्यायपालिका ने अनेकों अधिकार यथा बंदी अधिकार निःशुल्क विधिक सहायता पारिस्थितकीय तंत्र संगत व प्रदूषण के विरूद्ध अधिकार निजता का अधिकार इत्यादि के जन्म का आधार रहा है।

बंदियो के मानवाधिकार–मानवीय गरिमा का सिद्धांत

मेनका गॉधी व हुसैन आरा खातून (प्रथम) से जो सिलसिला प्रारंभ हुआ वह निःशुल्क विधिक सहायता से लेकर राज्य के प्रतिकर तक चला तथा अनेक मानवाधिकारो को बंदियो को सर्वोच्च अदालत के द्वारा प्रस्तुत एवं प्रदत्त किया गया ।

न्यायिक सृजनात्मकता एवं नवाचार, को बंदी अधिकारो की ओर आकृष्ट करने का कारण अनुच्छेद 21

के साथ–साथ मानवाधिकारो की सार्वभौमिक घोषणा 1948[23] भी रही है। इसे संयुक्त राष्ट्र ने उद्घोषित किया था जिसका भारत भी एक साहस्ताक्षरीय था इसके अनुच्छेद 5 में प्रताड़ना तथा क्रूर व्यवहार को प्रतिषेध किया गया है इसके साथ–साथ सिविल एवं राजनीतिक अधिकारो की प्रसंविदा 1966 की धारा 10(1) का प्राविधान कि मानवीय स्वतंत्रता में माननीय गरिमा तथा मानवता अर्न्तनिहित है। अतः माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने बंदियो के मानवीय गरिमा के अधिकार का सूत्रपात कर न्यायिक सक्रियता अथवा सृजनशीलता का परिचय दिया है।

एकांत परिरोध एवं बेड़ियॉ लगाने के विरूद्ध अधिकार

सुनील बत्रा प्रति दिल्ली प्रशासन[24] के वाद में एकांत परिरोध पद पर माननीय सर्वोच्च अदालत ने विचार किया, एकान्त परिरोध (सॉलिटरी कनफाइनमेंट) का अधिकार प्रिजन एक्ट 1894 की धारा 30(2) में है। जिसके अनुसार मृत्यु दण्ड आदेश प्राप्त व्यक्ति को एकान्त परिरोध में रखने की व्यवस्था हैं वही धारा 56 के अनुसार कैदियो के पैरो में बेड़ियां लगाने का उपबन्ध है।

माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने याची सुनील बत्रा जो कि एक मृत्यु दण्ड प्राप्त अभियुक्त था पर एकान्त परिरोध को गैर कानूनी तथा संविधान विसंगत माना माननीय न्यायालय ने कहा कि याची के पास सर्वोच्च न्यायालय मे अपील का अधिकार एवं राष्ट्रपति के पास माफी हेतु जाने का अधिकार है, अतः यह बिल्कुल मनमाना है।

इसी वाद में पैरो में बिना किसी ठोस तथा युक्तियुक्त आधार के कैदियो को बेड़िया लगाना मानवीय गरिमा जो कि अनुच्छेद 21 का अति आवश्यक भाग के खिलाफ है। माननीय सर्वोच्च अदालत ने प्रिजन एक्ट 1894 की धारा 56 पर सृजनशीलता दिखाते हुये नये उपबन्ध कर निम्ननिर्देश जारी किये।

1. जब बेड़ी लगाने की पूर्ण आवश्यकता हो तभी बेड़िया लगाई जायें।
2. बेड़िया पहनाने का क्या कारण है, इसको अभिलेखीकृत करना अनिवार्य है।
3. खतरनाक कृत्यकता की मूल शर्त के साथ बेड़िया लगाना चाहिए।
4. नैसर्गिक न्याय के सिद्धान्त को अपनाना चाहिए।
5. यथा संभव प्रथम अवसर पर बेड़िया हटा लेनी चाहिए।
6. प्रतिदिन बेड़िया लगाने की समीक्षा आवश्यक है।
7. एक दिन से अधिक बेड़ी लगाने का विवेकाधिकार डी0एम0 व सेशन जज का होगा।

अतः प्रिजन एक्ट की धारा 30(2)व 56 पर उक्त वाद में न्यायिक नवाचार प्रक्रियात्मक पक्ष में किया गया।

हथकड़ी लगाने के विरूद्ध अधिकार

माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष प्रेमशंकर प्रति दिल्ली प्रशासन[25] के वाद में प्रश्न आया कि क्या हथकड़ी लगाना वैध है अथवा नहीं? माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि हथकड़ी लगाना प्रथम दृष्टया अमानवीय व अयुक्तियुक्त है तथा मनमानी पूर्ण है। बिना किसी प्रक्रियात्मकता के हथकड़ी लगाना सर्वथा अनुच्छेद '21' का उल्लंघन है, क्योंकि यह शरीर क्रिया पर लोहा सर्वथा विपरीत प्रभाव देता है। माननीय न्यायमूर्ति कृष्णा अय्यर ने स्पष्टतः निर्देश दिया कि दैनिक परिचर्या में बन्दी को हथकड़ी पहनाना सर्वथा संविधान विसंगत है। मात्र आपवादिक परिस्थितियों में यथा सुरक्षा हेतु खतरा हो, बेहद दुस्साहसी अथवा भयंकर बंदी हो, उपद्रवी अथवा गम्भीर गैर जमानती अपराध में सम्मिलित रहा हो।

इसके साथ–साथ दिल्ली न्यायिक सेवा संघ प्रति गुजरात राज्य[26] के वाद में हथकड़ी लगाने के प्रश्न पर अधिक व्यापकता से विचार किया गया तथा न्यायिक अधिकारी की गिरफ्तारी तथा निरोध सम्बंधी दिशा–निर्देश जारी किए एवं पुलिस के अमानवीयता एवं स्वेच्छाचारिता को मानवीय गरिमा का अतिलंघन कारी करार दिया गया।

कैदियों के साथ अमानवीय व्यवहार के विरूद्ध अधिकार

मानवीय सर्वोच्च न्यायालय ने पुलिस द्वारा हवालात में थर्ड डिग्री अत्याचार को अनुच्छेद 14 तथा 19 का अतिलंघनकारी करार दिया। वहीं किशोर सिंह प्रति राजस्थान राज्य[27] के वाद में पुलिस द्वारा थर्ड डिग्री अत्याचार अनुच्छेद 21 का उल्लंघनकारी है, यह तथ्य माननीय उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया।

डी0के0 बसु प्रति पश्चिम बंगाल राज्य[28] के बाद में पुलिस हिरासत में अत्याचार पर दिशा–निर्देश जारी कर अपनी सृजनशीलता एवं सक्रियता का परिचय दिया।

त्वरित विचारण का अधिकार

शीघ्र विचारण भी बंदियों का मौलिक अधिकार है, यह माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने हुसैन आरा खातून(प्रथम) के वाद में निर्धारित किया।

डी0के0 बसु प्रति पश्चिम बंगाल राज्य[29] के सुप्रसिद्ध वाद में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अवैध गिरफ्तारी तथा बंदी उत्पीड़न रोकने हेतु एक निर्देशिका जारी किया, जिसमें बंदी अधिकारों को बढाया गया तथा पुलिस अधिकारियों के कर्त्वयों को निरूपित किया गया, यथा गिरफ्तारी मेमो तैयार करना, गिरफ्तार व्यक्ति के परिवारीजन को सूचित करना, गिरफ्तार व्यक्ति की पूर्ण पहचान निश्चित करना, गिरफ्तार व्यक्ति को गिरफ्तारी का कारण बताना, एक स्वतंत्र गवाह इत्यादि जो न्यायिक सृजनशीलता का अच्छा उदाहरण माना जा सकता है।

स्वस्थ पर्यावरण का अधिकार

गंगा रीवर पाल्यूशन केस, भारतीय न्यायपालिका के सृजनात्मकता एवं सक्रियता का उदाहरण है। इस वाद में कहा गया कि स्वस्थ पर्यावरण मानवीय गरिमा के लिए अपरिहार्य है। अतः स्वस्थ पर्यावरण एक मौलिक अधिकार है जो अनुच्छेद 21 का सहचारी है। अत : सरकार इसके लिये उत्तरदायी है।

माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने विभिन्न वादों में पर्यावरण के सुरक्षा हेतु विभिन्न सिद्धांतों का सृजन कर पर्यावरण विधायी प्रकिया में सक्रियता के साथ सृजनशीलता एवं नवाचार को प्रतिस्थापित किया है जो अग्रलिखित है–

पूर्ण दायित्व का सिद्धांत

माननीय सर्वोच्च न्यायालय में एम0सी0 मेहता प्रति श्रीराम फूड्स एण्ड फर्टीलाइजर इण्डस्ट्रीज[30] के वाद में ओलियम गैस रिसाव से हुई जनहानि को संज्ञान में

लेकर खतरनाक उद्योगों को चलाने वाले इकाई या समूह पर पूर्ण सुरक्षा का उत्तरदायित्व का सिद्धांत प्रतिपादित किया ताकि किसी प्रकार की पर्यावरणीय या जनहानि न हो सके।

प्रदूषणकर्ता की अदायगी का सिद्धांत

इण्डियन कौंसिल आफ एडवाइस एण्ड लीगल एक्शन प्रति भारत संघ[31] के वाद में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने स्पष्ट किया कि प्रदूषण कर्ता का दायित्व न केवल प्रदूषण से क्षतिग्रस्त उस व्यक्ति तक है, वरन् प्रदूषण को समाप्त करने में आये समस्त आर्थिक व्यय की जिम्मेदारी उस व्यक्ति की है।

पूर्ण सावधानी बरतने का सिद्धांत

वेल्लोर सिटिजन वेलफेयर फोरम प्रति भारत संघ[32] के वाद में माननीय उच्चतम न्यायालय ने स्पष्ठ किया कि खतरनाक उद्योगों को संचालित करने वाले समूह या स्वामी का पूर्ण सावधानी बरतने का सिद्धांत एक अत्यांतिक कर्त्वय है।

लोक विश्वास का कर्त्वय

एम0सी0 मेहता प्रति कमलनाथ[33] के वाद में माननीय उच्चतम न्यायालय ने स्पष्ट किया कि सरकार का प्राकृतिक स्रोतों, नदियों, समुद्र इत्यादि को सुरक्षित रखने तथा स्वस्थ इको सिस्टम बनाए जाने का कर्त्वय सरकार का है।

निजता का अधिकार

सर्वोच्च न्यायालय ने अपने अद्यतन वाद न्यायमूर्ति के0एस0 पुट्टास्वामी(सेवानिवृत्ति) प्रति भारत संघ[34] के वाद में निजता के अधिकार को अनुच्छेद 21 के अन्तर्गत एक अत्यांतिक मौलिक अधिकार मान लिया जो भारत के संवैधानिक इतिहास में मौलिक अधिकारों पर संभवतः सबसे बड़ा परिवर्तन माना जा सकता है। यह न्यायिक सक्रियता, सृजनशीलता तथा नवाचार की पराकाष्ठा है।उपर्युक्त वाद, एम0पी0 शर्मा[35] एवं खड़ग सिंह[36] के वादों में दिए गये निर्णय कि निजता का अधिकार मौलिक अधिकार नहीं है को उलट कर माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निजता को पूर्ण अधिकार माना है।

निष्कर्ष एवं सुझाव

उर्पयुक्त विभिन्न न्यायिक उद्घोषित अधिकारों के विश्लेषण के बावजूद प्रश्न शेष बचता है कि भारतीय न्यायपालिका के नवनिर्मित अधिकार लिखित संविधान की संकल्पना एवं संविधानवाद के सिद्धांत पर प्रतिघात तो नहीं है? न्यायपालिका स्वयं समानांतर विधि निर्माण में सक्रिय है तथा इस सृजनशीलता एवं न्यायिक नवाचार का कारण कहीं न कहीं व्यवस्थापिका की विधि निर्माण में निष्क्रियता एवं कार्यपालिकीय प्रमाद है। परन्तु इससे संविधानवाद एवं लिखित संविधान के सिद्धांत पर प्रतिघात अवश्य है। यद्यपि यह ''पूर्ण न्याय'' की संकल्पना पर आंशिक सत्य हो सकता है पर पूर्णतया विधिशास्त्रीय तथा लोकतांत्रिक सिद्धांतों के प्रतिकूल है। अति विनम्रता के साथ निवेदन है कि यह न्यायिक संविधान पुर्नलेखन है जो जनतांत्रिक भावना के प्रतिकूल है, जैसा कि अटार्नी जनरल ने के0एस0 पुट्टास्वामी के वाद में तर्क दिया था कि संविधान निर्माता संभवतः कभी भी निजता के अधिकार को मौलिक अधिकार नहीं बनाना चाहते थे। अतएव इस पर कोई दो राय नहीं हो सकती कि हमारी सर्वोच्च न्यायपालिका, न्यायालय निर्मित संविधान को लिखित संविधान पर अभिभावी कर रही है, इसके दो प्रमुख कारण हैं। प्रथम – विधायिका की उदासीनता तथा कार्यपालिका की निष्क्रियता के कारण, जनआकांक्षा का अंतिम पड़ाव न्यायपालिका बन चुकी है। द्वितीय – न्यायपालिका की अति सक्रियता तथा संविधान निर्माण व विधि निर्माण की उत्कंठा। अति विनम्रता से निवेदन है कि द्वितीय कारण संविधान व संविधानावाद के सिद्धांत संगत नहीं कहा जा सकता।

आज न्यायिक सक्रियता अतिसक्रियता के रूप में परिवर्तित होती दिखाई दे रही है। सविधान पुर्नलेखन का अधिकार शासन के किसी अंग को नहीं है। संभवतः इसी तथ्य को आधार रखकर माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने केशवानंद भारती[37] के वाद में मूलभूत ढांचे के सिद्धांत का प्रतिपादन किया, जिसके आधार पर व्यवस्थापिका एवं कार्यपालिका को संविधान के मूलभूत ढांचे में कोई परिवर्तन का अधिकार नहीं है। सुधांशु रंजन न्यायिक सृजनशीलता अथवा सक्रियता को ज्यूडोक्रेसी[38] नाम देते हैं। पूर्व राष्ट्रपति श्री प्रणव मुखर्जी ने भी न्यायिक स्व अनुशासन की अवधारणा को व्यक्त करते हुए कहा था कि ''लोकतन्त्र के प्रत्येक अंग को अपने क्षेत्र में रहकर कार्य करना चाहिये और दूसरे अंग के निर्धारित क्षेत्र को अधिग्रहीत नहीं करना चाहिये''[39]

अतः उपरोक्त विश्लेषण का परिशीलन करने के पश्चात कहा जा सकता है कि न्यायपालिका में जो स्वयं आधारभूत ढांचे का सिद्धांत अन्य अंगों हेतु विश्लेषित करती है उस पर भी अक्षरशः उक्त सिद्धांत लागू होता है। कतिपय मामलों में न्यायिक अर्थानवयन भावनात्मक एवं सृजनात्मक हो सकता है तथा पूर्ण न्याय के सिद्धांत को लागू करने वाला भी हो सकता है, परन्तु संविधान निर्माण अथवा विधि निर्माण न्यायपालिका का अधिकारक्षेत्र बिल्कुल नहीं कहा जा सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *संविधानवाद वस्तुतः 1215 के मैग्नाकार्टा के साथ प्रारंभ माना जाता है।*
2. *टी0एम0ए0 पाई फाउण्डेशन प्रति कर्नाटक राज्य, (2002) 85सीसी 481*
3. *ए0आई0आर0 1951, सु0को0 41*
4. *डा0 सी गिरिजाम्बुल प्रति आंध्रप्रदेश सरकार (1982) उम0नि0*
5. *ब्रिजभूषण प्रति दिल्ली राज्य, ए0आई0आर0 1950 एस0सी0129 एक्सप्रेस न्यूजपेपर्स (प्रा0) लिमिटेड बनाम भारतसंघ, ए0 आई0आर0 1962 सु0को0 305.*
6. *रमेश थापर प्रति मद्रास राज्य, ए0आई0आर 1950 सु0को0 124*
7. *एक्सप्रेस न्यूजपेपर्स (प्रा0) लिमिटेड प्रति भारत संघ, ए0आई0आर0 19585 एस0सी0 57*
8. *बेन्नेट कालमैन कम्पनी प्रति भारत संघ (1972)2 एस0एस0सी0 785*
9. *इण्डियन एक्सप्रेस न्यूजपेपर्स (मुम्बई)प्रा0लि0 प्रति भ1 एस0सी0सी0 641*

10. सकल पेपर्स (प्राईवेट) लिमिटेड प्रति भारत संघ, ए0आइ रतसंघ,(1985)1 एस0सी0सी0 641
11. [1] सकल पेपर्स (प्राईवेट) लिमिटेड प्रति भारत संघ, ए0आई0आर0 1962 एस0सी0 305
12. ए0आई0आर0 1962 सु0को0 1166
13. ओ0के0घोष प्रति ई0एक्स0जोसेफ ए0आई0आर0 1963 सु0को0 812
14. (2003)6 एस0सी0सी0 581
15. (1985)3 एस0सी0सी0 345
16. ए0आई0आर0 1967 सु0को0 186
17. हुसैन आरा खातून प्रति तह सचिव (1980)1 एस0सी0सी0 108
18. हुसैन आरा खातून प्रति गृह सचिव (1980)1 एस0सी0सी0 98,
19. (2000)10 एस0सी0सी0 542
20. (1983)4 उम0नि0प0 387
21. (2000)1 एस0सी0सी0 572
22. (2000)10 एस0सी0सी0 664.
23. 10 दिसम्बर 1948(प्रस्ताव कमांक 217)
24. ए0आई0आर0 1978 सू0को0 1675
25. ए0आई0आर0 1980 सु0को0 1335
26. (1991)4 ए0सी0सी0 406
27. ए0आई0आर0 1981 सु0को0 625
28. ए0आई0आर0 1997 सु0को0 610
29. ए0आई0आर0 1997 सु0को0 610
30. 1987 ए0आई0आर0 1086
31. रिट पिटीशन(सिविल) 967 सन् 1989(18 जुलाई 2011)
32. रिट नं0 914 सन् 1991(सिविल), 26.04.1996
33. (1997) एस0एस0सी0 388
34. डब्ल्यू0पी0(सिविल) नं0 220/2015 एवं अन्य, न्यायमूर्ति डी0वाई0 चन्द्रचूढ, दिनॉक 24.08.2017
35. एम0पी0 शर्मा प्रति सतीश चन्द्र एवं अन्य, ए0आई0आर0 1954 सु0को0 300
36. खड़ग सिंह प्रति उ0प्र0 राज्य, ए0आई0आर0 1963 सु0को0 1295
37. (1973)4 एस0सी0सी0 225
38. सुधांशु रंजन ''जस्टिस, जुडोकेसी एण्ड डेमोकेसी इन इण्डिया बाउण्ड्रीज एण्ड ब्रीचेज'', राट्लेज इण्डिया 2012
39. 16 अप्रैल 2016(Indian Express.com)